नईदुनिया

संपादकीय

दवाओं की खुली लूट : मरीज मर रहा है और सिस्टम नोट गिन रहा है

बीस रुपये की दवा बाईस सौ रुपये में बेचना व्यापार नहीं, हत्या है। दवाओं की बेलगाम कीमतों पर किसी का नियंत्रण नहीं है। यह अराजकता नहीं, संगठित लूट है। दवा की विनिर्माण लागत बीस रुपये और पैकिंग के साथ कीमत बाईस सौ रुपये। यह अंतर नहीं, डकैती है। यह डकैती दिनदहाड़े अस्पतालों के गलियारों में मरीजों की आंखों के सामने हो रही है और सरकारें आंखें बंद किए बैठी हैं। दवा को जीवनरक्षक कहा जाता है, पर बाजार में इसे सोने से महंगा बना दिया गया है। कैंसर या हृदय रोग की दवा खरीदने के लिए आम आदमी कर्ज लेता है, जमीन बेचता है और फिर भी कई बार जान नहीं बचा पाता, क्योंकि इलाज से पहले ही लूट उसे तोड़ देती है।

राष्ट्रीय औषध मूल्य निर्धारण प्राधिकरण (एनपीपीए) ने 543 ब्रांडेड दवाओं और 137 कैंसररोधी दवाओं पर ट्रेड मार्जिन सीमित करने का निर्णय लिया। सुप्रीम कोर्ट की चिंता के बाद यह कदम उठाया गया, पर सवाल यह है कि बाकी हजारों दवाओं का क्या होगा? क्या मरीज केवल इन्हीं दवाओं से बीमार होते हैं? सरकार स्वीकार करती है कि उत्पादन लागत और अधिकतम खुदरा मूल्य के बीच बड़ा अंतर है, तो फिर यह अंतर आज तक क्यों बना हुआ है? स्वास्थ्य संबंधी संसदीय समिति कई बार चिंता जता चुकी है, लेकिन चिंता जताने से कीमतें कम नहीं होतीं, कार्रवाई से होती हैं। कार्रवाई कहीं दिखाई नहीं देती।

सरकार ने ट्रेड मार्जिन को 30 प्रतिशत तक सीमित करने के फैसले को सही दिशा में उठाया गया कदम बताया, लेकिन यह भी सवालों से परे नहीं है। बीस रुपये की चीज पर 30 प्रतिशत जोड़ने से कीमत छब्बीस रुपये होती है, बाईस सौ रुपये नहीं। लागत बीस रुपये और एमआरपी बाईस सौ रुपये हो, तो इसे 30 प्रतिशत मार्जिन का नाम कैसे दिया जा सकता है? यह मुनाफा नहीं, मरीजों के साथ अन्याय है। अस्पतालों में बिकने वाली दवाओं की कीमतों पर पारदर्शिता और प्रभावी नियंत्रण का अभाव है। डॉक्टर दवा लिखता है, मेडिकल स्टोर देता है और मरीज चुपचाप लुटता है। सुप्रीम कोर्ट ने महंगी दवाओं और अस्पतालों के माध्यम से बेची जाने वाली दवाओं की कीमतों पर नियंत्रण को लेकर सवाल उठाए हैं। सरकार को इसका ठोस जवाब देना होगा। दवा निर्माताओं, नौकरशाहों और उन्हें संरक्षण देने वाले गठजोड़ को कौन तोड़ेगा? यह सवाल हर घर में गूंज रहा है। दवा कंपनियों और डॉक्टरों के बीच हितों के टकराव की आशंकाओं से लेकर सरकारी खरीद में कीमतों की पारदर्शिता तक, हर स्तर पर जवाबदेही जरूरी है। सरकारी अस्पतालों में भी मरीजों को बाहर से महंगी दवाएं खरीदने के लिए मजबूर होना पड़ता है। जेनेरिक दवाएं लिखने के नियम कागजों पर हैं, लेकिन उनका प्रभावी पालन सुनिश्चित करना जरूरी है। ब्रांडेड दवाओं की बिक्री से जुड़े प्रोत्साहनों और कमीशन की व्यवस्था पर भी सख्त निगरानी होनी चाहिए।

दवा कंपनियां अनुसंधान और नवाचार की लागत का हवाला देकर ऊंची कीमतों को उचित ठहराती हैं। लेकिन एक ही सॉल्ट की दवा अलग-अलग कंपनियां दस रुपये से दो हजार रुपये तक में कैसे बेचती हैं? पेटेंट के अधिकार जरूरी हैं, लेकिन उनकी आड़ में जीवनरक्षक दवाओं को आम आदमी की पहुंच से बाहर नहीं किया जा सकता। सरकारों को इस पर गंभीर सवाल उठाने चाहिए और जनता के हितों की रक्षा करनी चाहिए।

अब बहुत हो गया। सरकार को जागना होगा। हर दवा की लागत और मूल्य निर्धारण का आधार पारदर्शी बनाया जाए। ट्रेड मार्जिन पर प्रभावी नियंत्रण हो, अस्पतालों में जेनेरिक दवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए और नियमों का उल्लंघन करने वालों पर कार्रवाई हो। एनपीपीए को केवल 543 दवाओं तक सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि पूरे दवा बाजार पर प्रभावी निगरानी रखनी चाहिए। यदि सरकारें अब भी नहीं जागीं, तो इतिहास यही दर्ज करेगा कि इस देश में मरीजों को बीमारी के साथ-साथ दवाओं की महंगाई और व्यवस्था की लापरवाही ने भी मारा, जबकि सरकारें देखती रहीं।

धरती जल रही है और उद्योगपतियों की जेबें भर रही हैं : सुपर रिच की कार्बन डकैती पर तीखा प्रहार

सबसे बड़ा झूठ : ग्लोबल वार्मिंग सबकी जिम्मेदारी है

बरसों से हमें एक झूठ पढ़ाया गया कि ग्लोबल वार्मिंग के लिए हम सब जिम्मेदार हैं। आपने पॉलिथीन इस्तेमाल की, आपने गाड़ी चलाई, आपने एसी चलाया, इसलिए धरती गर्म हो रही है। ऑक्सफैम की नई रिपोर्ट 'डिजास्टर डिवाइड' ने इस झूठ को बेनकाब कर दिया है। रिपोर्ट कहती है कि दुनिया के सबसे अमीर 0.1 प्रतिशत लोग बाकी 99.9 प्रतिशत की तुलना में 400 गुना ज्यादा जलवायु तबाही मचा रहे हैं। दुनिया के 80 लाख सुपर रिच लोगों का कार्बन प्रदूषण 3.5 अरब लोगों के कुल प्रदूषण से ज्यादा है। यानी एक तरफ 80 लाख लोग धरती को फूंक रहे हैं और दूसरी तरफ 3.5 अरब लोग उसकी सजा भुगत रहे हैं। यह जलवायु संकट नहीं है, यह जलवायु अपराध है और अपराधी साफ दिखाई दे रहा है।

आंकड़े नहीं, यह लूट का बहीखाता है: कौन कितना जलाता है : रिपोर्ट के आंकड़े देखिए और गुस्सा कीजिए। सबसे धनी 0.1 प्रतिशत लोग दुनिया की कुल आबादी में आटे में नमक के बराबर हैं, लेकिन कुल कार्बन उत्सर्जन का 7 प्रतिशत अकेले डकार जाते हैं। सबसे धनी 1 प्रतिशत लोग 19 प्रतिशत प्रदूषण फैलाते हैं। सबसे धनी 10 प्रतिशत लोग 59 प्रतिशत प्रदूषण के लिए जिम्मेदार हैं। और नीचे देखिए, मध्यम आय वाले 40 प्रतिशत लोगों की हिस्सेदारी 46 प्रतिशत है, क्योंकि उन्हें जीना है। सबसे गरीब 50 प्रतिशत लोग, जिनके पास पहनने को ढंग के जूते नहीं हैं, उनकी हिस्सेदारी सिर्फ 9 प्रतिशत है। मतलब साफ है, जो सबसे कम खाता है, वह सबसे कम उत्सर्जन भी करता है, पर सजा उसी को मिल रही है। जो सबसे ज्यादा उड़ता है, वह सबसे ज्यादा प्रदूषण फैलाता है, लेकिन कुर्सी पर वही बैठा है।

याट, जेट और महलों की हवस: इनकी ऐशो-आराम गरीब की मौत है : इन सुपर रिच लोगों की जीवनशैली किसी राक्षस की भूख जैसी है। एक व्यक्ति के पास पांच महल हैं। हर महल साल के 365 दिन एयर कंडीशनिंग पर चलता है। एक महल का एक दिन का बिजली खर्च किसी अफ्रीकी गांव के पूरे महीने के खर्च से ज्यादा है। इनके पास प्राइवेट जेट हैं। एक प्राइवेट जेट की दो घंटे की उड़ान एक आम भारतीय के पूरे साल के कार्बन उत्सर्जन से ज्यादा प्रदूषण छोड़ सकती है। रिपोर्ट कहती है कि एक प्राइवेट जेट का सिर्फ दो सेकंड का उत्सर्जन एक आम व्यक्ति के पूरे साल के उत्सर्जन के बराबर है। सोचिए, आप साल भर साइकिल चलाते हैं, बस में धक्के खाते हैं और यह आदमी दो सेकंड में आपका पूरा हिसाब बराबर कर देता है। इनके पास सुपर याट हैं। एक सुपर याट एक हफ्ते में जितना डीजल पीती है, उतना एक मछुआरा अपनी पूरी जिंदगी में नहीं पीता। इनका फैशन, इनका खाना, इनका कुत्ता भी कार्बन उत्सर्जन करता है। इनका कुत्ता भी बिजनेस क्लास में उड़ता है। यह विलासिता नहीं है, यह सामूहिक हत्या की तैयारी है।



सबसे बड़ा खेल निवेश का धुआं: पैसा इनका और धुआं गरीब के फेफड़ों में : यदि जीवनशैली अपराध है, तो निवेश महाअपराध है। ये लोग तेल, कोयला, गैस, सीमेंट, हथियार और फास्ट फैशन कंपनियों के मालिक हैं या इनमें पैसा लगाते हैं। ये कंपनियां धरती खोदती हैं, तेल निकालती हैं, कोयला जलाती हैं, नदियां सुखाती हैं और जंगल काटती हैं। मुनाफा इनकी जेब में जाता है। धुआं किसके हिस्से आता है? बिहार के किसान के खेत में बाढ़ बनकर, बुंदेलखंड के सूखे में, असम के डूबते गांवों में और मुंबई की धंसती झोपड़ियों में।

ऑक्सफैम ने इसे बिल्कुल सही कहा है कि धनी लोग दर्द देकर मरहम लगाने का काम करते हैं। पहले ये प्रदूषण फैलाने वाली कंपनियों में निवेश करके अरबों कमाते हैं। फिर जब बाढ़ आती है और सूखा पड़ता है, तो यही लोग बीमा कंपनियों, निजी अग्निशमन सेवाओं, जलापूर्ति कंपनियों और बंकर बनाने वाली कंपनियों में निवेश करके फिर अरबों कमाते हैं। यानी बीमारी भी इनकी और दवाई भी इनकी, मरीज सिर्फ गरीब है।

दोहरी दुनिया का नंगा सच: एक के लिए बंकर, दूसरे के लिए कफन : जलवायु परिवर्तन का सबसे घिनौना चेहरा यह है कि सुरक्षा भी अब बिकाऊ है। जब समुद्र का जलस्तर बढ़ेगा, तो सुपर रिच के पास न्यूजीलैंड में बंकर होंगे, हवाई में पहाड़ी पर महल होंगे। उनके पास निजी अग्निशमन दल होंगे, जो उनके महलों को बचाएंगे। उनके पास डॉक्टरों की पूरी टीम होगी, जो उनके लिए साफ हवा का इंतजाम करेगी। उनके पास तो मंगल पर जाने का टिकट भी बुक है। और गरीब के पास क्या है? रिपोर्ट कहती है कि 2050 तक 100 करोड़ लोग विस्थापित होंगे, यानी 100 करोड़ लोग अपना घर छोड़ने पर मजबूर होंगे। वे कहां जाएंगे? उनके लिए कोई बंकर नहीं है, कोई वीजा नहीं है। उनके सामने समुद्र है या रेगिस्तान, तंबू है या मौत। एक तरफ सुपर रिच खुद को सुरक्षित कर लेते हैं, दूसरी तरफ गरीब अपनी जमीन, फसल और जीवन से हाथ धो बैठता है। यही तो 'डिजास्टर डिवाइड' है, आपदा का बंटवारा। आपदा सबके लिए एक जैसी नहीं है, उसका सबसे बड़ा बोझ गरीब पर पड़ता है।

सरकारें क्यों चुप हैं: चंदे और धंधे का गठजोड़ : सरकारें इन पर हाथ क्यों नहीं डालतीं? इनके जेट पर टैक्स क्यों नहीं लगता? इनकी याट पर भारी कर क्यों नहीं लगाया जाता? जवाब सीधा है, ये ही लोग चुनावी चंदा देते हैं, ये ही लोग थिंक टैंक चलाते हैं, ये ही लोग मीडिया खरीदते हैं और ये ही लोग बताते हैं कि विकास क्या है। इनके लिए कार्बन टैक्स विकास विरोधी है, इनके लिए पर्यावरण कानून तरक्की में बाधा है। सरकार गरीब से कहती है कि आप एक पौधा लगाइए और अमीर से कहती है कि आप एक और तेल का कुआं खोद लीजिए। यह नीति नहीं है, यह दलाली है।

अब क्या होना चाहिए: लगाम लगानी होगी, वरना सब डूबेंगे : बहुत हो गया ज्ञान, अब कार्रवाई चाहिए। इनके कार्बन उत्सर्जन पर भारी कर लगाओ। प्राइवेट जेट पर 500 प्रतिशत टैक्स, सुपर याट पर 500 प्रतिशत टैक्स और कई महलों पर कार्बन सरचार्ज लगाओ। प्रदूषण फैलाने वाले निवेश पर भारी जुर्माना लगाओ। इस पैसे को गरीब देशों को दो, जो देश डूब रहे हैं, जो देश जल रहे हैं, उनके लिए जलवायु कोष बनाओ। यह भीख नहीं है, यह हर्जाना है। जीवाश्म ईंधन कंपनियों में निवेश को बढ़ावा देना बंद करो। इनकी जवाबदेही तय करो। जलवायु विस्थापितों के लिए वैश्विक नागरिकता और पुनर्वास की व्यवस्था बनाओ। यदि तुम्हारे धुएं से किसी का घर डूबा है, तो उसे बसाने की जिम्मेदारी भी तुम्हारी है। यदि यह नहीं हुआ, तो समझ लीजिए कि धरती सिर्फ गर्म नहीं होगी, धरती फटेगी। और जब फटेगी, तो न बंकर बचेगा, न महल, क्योंकि धरती सबकी है, ऑक्सीजन सबकी है और जब ऑक्सीजन ही जहरीली हो जाएगी, तो सोने की ईंट भी सांस नहीं दे पाएगी। यह लड़ाई पर्यावरण की नहीं है, यह लड़ाई इंसाफ की है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

त्यौहारों पर वोकल फॉर लोकल

त्योहारों पर क्या हम अपने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की अपील का पालन करेंगे? वोकल फॉर लोकल को प्राथमिकता देते हुए हम त्योहारों में देशी उत्पाद खरीदें, न कि विदेशी। प्रधानमंत्री ने अपने चर्चित कार्यक्रम 'मन की बात' के 139वें एपिसोड में कहा कि देश में वोकल फॉर लोकल की भावना मजबूत हो रही है। बाजारों में स्वदेशी उत्पादों की रौनक दिखाई दे रही है। देश के हर हिस्से में लोग चमक-दमक वाले चीनी उत्पादों के बजाय स्वदेशी सामान को प्राथमिकता देने लगे हैं। मिट्टी, जूट, गोबर, कागज और फूलों से बने सजावटी उत्पाद खूब पसंद किए जा रहे हैं। स्थानीय कलाकारों द्वारा बनाए गए सजावटी सामान बच्चों से लेकर बड़ों तक सभी का मन मोह रहे हैं।



दीपोत्सव पर परंपरागत रूप से मिट्टी के दीये जलाने की रीति रही है। दिखावटी चमक-दमक की जगह अब लोगों में प्रकृति को संजोने वाली परंपराओं की ओर लौटने का रुझान भी स्पष्ट दिखाई देता है। अपने देश में बने सामान के साथ उत्सव मनाने के प्रति गर्व का भाव भी बढ़ रहा है। बीते कुछ वर्षों में सरकार ने वोकल फॉर लोकल की मुहिम को बल देने की दिशा में काम किया है। देश को आत्मनिर्भर बनाने की इस राह में सरकार के प्रयासों को आमजन का सहज साथ भी मिला है। प्रधानमंत्री ने स्थानीय कारीगरों के उत्पादों को प्राथमिकता देने की अपील करते हुए कहा है कि इससे उनकी मेहनत को प्रोत्साहन मिलेगा।

दीपावली पर घर की साज-सज्जा से लेकर खानपान और पहनावे तक, हर तरह के सामान की खरीदारी बढ़ जाती है। ऐसे में गांवों, कस्बों और शहरों में स्वदेशी उत्पादों की खरीदारी कारीगरों, व्यवसायियों और पारंपरिक कला को सहेजने वालों के जीवन में भी उजाला लाती है। वोकल फॉर लोकल की सोच अपनी जड़ों से जोड़ने के साथ देश की अर्थव्यवस्था को संवारने वाली भी है। इससे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से नवाचार तथा रोजगार को बढ़ावा मिलता है। इस वर्ष गांधी जयंती पर एक ही दिन में खादी ग्रामोद्योग के उत्पादों की करीब 28 करोड़ रुपये से अधिक की बिक्री हुई। बीते साल की तुलना में यह करीब डेढ़ करोड़ रुपये अधिक है। इस खरीद का लाभ खादी, हस्तशिल्प और दूसरे उत्पाद तैयार करने वाले कारीगरों तक भी पहुंचता है। हालांकि, यह सब पढ़कर अच्छा लगता है, लेकिन सवाल है कि क्या केवल प्रधानमंत्री की अपील से यह बदलाव आ जाएगा? अपील का असर तभी होता है, जब अपील करने वाला खुद उस पर अमल करता दिखाई दे। यदि मंच से स्वदेशी खरीदने की बात कही जाए और व्यवहार में विदेशी सामान का उपयोग हो, तो जनता भ्रमित होती है। जनता भाषण नहीं, आचरण देखती है। इसलिए अपील करने वालों को भी देशी उत्पाद खरीदकर उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए। सांसद, विधायक, पार्षद और अधिकारी यदि खुद मिट्टी के दीये, कुम्हार के बनाए सजावटी सामान, खादी के कपड़े और स्थानीय मिठाइयां खरीदते दिखाई दें, तो संदेश अपने आप घर-घर पहुंचेगा। यह खरीद केवल तस्वीर खिंचवाने के लिए नहीं, बल्कि वास्तविक समर्थन के लिए होनी चाहिए। बाजार में आज भी विदेशी सामान सस्ता और चमकदार दिखाई देता है। प्लास्टिक की झालर मिट्टी के दीये से सस्ती लग सकती है, लेकिन इसकी कीमत पर्यावरण और स्थानीय कारीगर चुकाते हैं। ग्राहक को लगता है कि वह पैसा बचा रहा है, लेकिन इससे देश का पैसा बाहर जाता है। स्थानीय उत्पादों में हाथों की मेहनत, समय और हुनर शामिल होता है। यदि हम केवल कीमत देखेंगे, तो स्थानीय उत्पादों को बढ़ावा देना मुश्किल होगा। लेकिन यदि हम यह समझें कि उनसे कितने परिवारों को रोजगार मिलता है और कितनी पारंपरिक कलाएं बचती हैं, तो स्वदेशी उत्पादों का महत्व स्पष्ट हो जाएगा। दीपावली से महीनों पहले कुम्हार चाक चलाता है। उसकी पत्नी दीये सुखाती है और बच्चे उन्हें रंगते हैं। पूरा परिवार उम्मीद करता है कि इस बार अच्छी बिक्री होगी और बच्चों के लिए नए कपड़े आएंगे। लेकिन त्योहार से पहले बाजार में विदेशी झालरें आ जाती हैं, ग्राहक उनकी ओर आकर्षित होता है और कुम्हार के दीये कोने में पड़े रह जाते हैं। यही स्थिति बांस के टोकरे बनाने वालों, दर्जियों, मोचियों और हलवाइयों की भी है। उनके उत्पादों में हुनर और परंपरा है, लेकिन बाजार में चमक-दमक का शोर अधिक है। वोकल फॉर लोकल का अर्थ है इस शोर के बीच स्थानीय कारीगरों की आवाज बनना और उनके उत्पादों को अपने घर का हिस्सा बनाना। यह दया नहीं, उनके श्रम का सम्मान है।

प्रधानमंत्री की अपील का पालन तभी प्रभावी होगा, जब ऊपर से नीचे तक एक समान प्रयास दिखाई देगा। स्कूलों में बच्चों को स्थानीय कारीगरों के काम से परिचित कराया जाए। कॉलेजों में युवा हस्तशिल्प को उपहार के रूप में देने का संकल्प लें और कार्यालयों में स्थानीय उत्पादों को प्राथमिकता दी जाए। अपील को अभियान और अभियान को आदत बनाना होगा। वोकल फॉर लोकल का अर्थ विदेशी उत्पादों से नफरत करना नहीं, बल्कि अपने लोगों और उनके हुनर से प्रेम करना है। जब हम स्थानीय उत्पाद खरीदते हैं, तो पैसा गांवों, कस्बों और शहरों में रहता है। दीपावली अंधेरे से उजाले की ओर जाने का त्योहार है। क्यों न इस बार उजाला अपने कुम्हार के दीये से करें, मिठास स्थानीय हलवाई की दुकान से लाएं और सजावट अपने ही देश के कारीगरों के उत्पादों से करें? यही वास्तविक आत्मनिर्भरता है। त्योहारों पर वोकल फॉर लोकल केवल नारा नहीं, बल्कि अर्थव्यवस्था, पर्यावरण और संस्कृति से जुड़ा संकल्प है। यह संकल्प तभी सार्थक होगा, जब अपील के साथ आचरण भी हो और कथनी-करनी में अंतर न रहे। इस दीपावली यदि हर घर में कम से कम एक ऐसा सामान पहुंचे, जिसे स्थानीय कारीगर ने बनाया हो, तो समझिए कि प्रधानमंत्री की अपील सार्थक हुई और देश का त्योहार सच में देश का त्योहार बना। **(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)**

उत्तर प्रदेश में नया सामाजिक समीकरण

2027 से पहले बिछ रही बिसात

उत्तर प्रदेश की राजनीति हमेशा जातीय समीकरणों के इर्द-गिर्द घूमती रही है, लेकिन अब ये समीकरण बदल रहे हैं। पहले कहा जाता था कि जिसकी जाति, उसकी सत्ता। अब कहा जा रहा है कि जिसकी भागीदारी, उसकी सत्ता। हर राजनीतिक दल समझ गया है कि केवल एक या दो जातियों के भरोसे सरकार नहीं बनाई जा सकती। इसलिए सभी दल नए सामाजिक गठजोड़ की तलाश में हैं। भाजपा, सपा, बसपा और कांग्रेस, सभी अपने-अपने तराजू पर समाज को तौल रहे हैं और हर दल का दावा है कि उसका तराजू सबसे संतुलित है।

भाजपा के पास इस समय सबसे मजबूत संगठन है। उसने गैर-यादव ओबीसी और गैर-जाटव दलितों को लाभार्थी योजनाओं के जरिये जोड़ने की कोशिश की है। उज्ज्वला, आवास, शौचालय और राशन जैसी योजनाओं के कारण एक बड़ा वर्ग भाजपा के साथ खड़ा दिखाई देता है। लेकिन अब इस वर्ग में भी सवाल उठ रहे हैं कि योजनाओं का लाभ तो मिला, पर राजनीतिक हिस्सेदारी कहां है? टिकटों में हिस्सेदारी नहीं मिली, मंत्रिमंडल में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला। इसलिए भाजपा नए चेहरों को आगे कर रही है, छोटे समाजों के सम्मेलन आयोजित कर रही है और सबको साथ लेकर चलने का संदेश दे रही है। उसे भी आशंका है कि यदि यह वर्ग उससे दूर हुआ, तो सत्ता का समीकरण बिगड़ सकता है।

समाजवादी पार्टी ने पिछड़ा, दलित और अल्पसंख्यक यानी पीडीए का नारा दिया है। अब इस सामाजिक आधार को और व्यापक बनाने की कोशिश हो रही है। इसमें गैर-यादव पिछड़ी जातियों और गैर-जाटव दलितों को विशेष रूप से जोड़ने पर जोर है। शाक्य, सैनी, प्रजापति, कुशवाहा, मौर्य, बिंद, निषाद, पासी, वाल्मीकि और खटीक जैसे समाज संख्या में बड़े हैं, लेकिन राजनीतिक सत्ता में उनकी हिस्सेदारी सीमित रही है। सपा इन समाजों को उनकी संख्या के अनुरूप भागीदारी देने का संदेश दे रही है। इसके लिए अलग-अलग जिलों में प्रभाव रखने वाले नेताओं को आगे लाया जा रहा है। यह प्रयोग नया है और इसमें जोखिम भी है।

बहुजन समाज पार्टी लंबे समय से अपेक्षाकृत शांत दिखाई दे रही है, लेकिन उसकी अपनी रणनीति है। मायावती जानती हैं कि बसपा का मूल आधार जाटव समाज है, लेकिन केवल इसी आधार पर सत्ता हासिल करना कठिन है। इसलिए सर्वजन की राजनीति और ब्राह्मण-दलित गठजोड़ की पुरानी रणनीति को नए रूप में सामने लाने की कोशिश हो सकती है। बसपा उन वर्गों पर भी नजर रख रही है, जो भाजपा और सपा से असंतुष्ट हैं। इनमें गैर-जाटव दलित और भाजपा में उपेक्षित महसूस करने वाले ब्राह्मण शामिल हो सकते हैं। पार्टी के सामने चुनौती अपने संगठन को सक्रिय और मजबूत बनाए रखने की है।

कांग्रेस भी उत्तर प्रदेश में नए सामाजिक समीकरण तलाश रही है। राहुल गांधी और प्रियंका गांधी जातीय जनगणना तथा हिस्सेदारी के मुद्दे उठा रहे हैं। कांग्रेस का 'जितनी आबादी, उतना हक' का नारा छोटे समाजों को आकर्षित करने की कोशिश है। पार्टी उन जातियों को भी जोड़ना चाहती है, जो उससे दूर हो गई थीं। हालांकि, जमीनी संगठन की कमजोरी उसके सामने बड़ी चुनौती है।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश में जाट, मुस्लिम और अति पिछड़े वर्गों के समीकरण महत्वपूर्ण हैं। मध्य उत्तर प्रदेश में कुर्मी, शाक्य और लोधी निर्णायक भूमिका निभा सकते हैं। पूर्वांचल में बिंद, निषाद, राजभर, पासी, ब्राह्मण और ठाकुर समाजों की भूमिका अहम है, जबकि बुंदेलखंड में लोधी, कुशवाहा और दलित मतदाता प्रभाव डाल सकते हैं। हर क्षेत्र की सामाजिक परिस्थितियां अलग हैं और राजनीतिक दल उसी के अनुसार अपनी रणनीति बना रहे हैं।

आज दल-बदल भी राजनीति का अहम हिस्सा बन गया है। नेता एक दल से दूसरे दल में जा रहे हैं। हर पार्टी को लगता है कि दूसरे दल के नेता को शामिल करने से उसके समाज का वोट मिल जाएगा, लेकिन मतदाता अब इस खेल को समझने लगा है। वह केवल नेता का झंडा नहीं, उसका काम और समाज के प्रति योगदान भी देखता है।

विधानसभा चुनाव 2027 में अभी समय है, लेकिन राजनीतिक तैयारियां शुरू हो चुकी हैं। भाजपा का जोर हिंदुत्व और लाभार्थी वर्ग पर है, सपा पीडीए के सहारे आगे बढ़ना चाहती है, बसपा अपने पारंपरिक आधार के साथ सर्वजन की संभावनाएं तलाश रही है और कांग्रेस हिस्सेदारी के मुद्दे पर समर्थन जुटाना चाहती है। हालांकि, अंतिम फैसला जनता के हाथ में है। वह देख रही है कि कौन-सा दल केवल वादे कर रहा है और कौन वास्तव में राजनीतिक भागीदारी दे रहा है।

सवाल यह भी है कि क्या इन नए समीकरणों से जनता का भला होगा? क्या गैर-यादव ओबीसी और गैर-जाटव दलितों को वास्तव में सम्मान, टिकट और सत्ता में भागीदारी मिलेगी, या उन्हें केवल वोट बैंक बनाकर इस्तेमाल किया जाएगा? यदि भागीदारी केवल चुनावी नारा बनकर रह गई, तो यह नया समीकरण भी पुराने समीकरणों की तरह टूट सकता है। राजनीति में चेहरे बदलने से नहीं, सोच बदलने से वास्तविक परिवर्तन आता है। उत्तर प्रदेश को अब ऐसी राजनीति की जरूरत है, जो सामाजिक समीकरणों से आगे बढ़कर वास्तविक भागीदारी और समान अवसर सुनिश्चित करे।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

आजकल

जेल की पाठशाला से नई जिंदगी की राह

नर्मदापुरम सेंट्रल जेल में जो हो रहा है, वह केवल एक शैक्षणिक गतिविधि नहीं, बल्कि दंड व्यवस्था के मूल दर्शन में बदलाव का संकेत है। जिन बंदियों को अपना नाम लिखना तक नहीं आता था, वे अब अंग्रेजी बोलना सीख रहे हैं और सुबह अधिकारियों का अभिवादन 'गुड मॉर्निंग' और 'थैंक यू सर' कहकर करते हैं। यह दृश्य छोटा लग सकता है, लेकिन इसका सामाजिक अर्थ बड़ा है। जेलें केवल सजा काटने की जगह नहीं, बल्कि सुधार गृह बनें, यही न्याय का वास्तविक उद्देश्य होना चाहिए। इस प्रयोग की खास बात यह है कि इसमें बाहर से शिक्षकों को बुलाने के बजाय जेल में बंद उच्च शिक्षित बंदी बुजेंद्र, रियाज खान, उमाकांत, सीताराम और अखिलेश दूसरे बंदियों को स्मार्ट बोर्ड की मदद से अंग्रेजी सिखा रहे हैं। जेल शिक्षक हरिओम सिंह और राज प्रताप की भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका है। यह मॉडल दोहरा सुधार करता है। एक ओर निरक्षर बंदी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, तो दूसरी ओर शिक्षित बंदी अपने ज्ञान का सकारात्मक उपयोग कर रहे हैं। इससे ज्ञान के साथ विश्वास और आत्मसम्मान भी बढ़ता है।

जेल में करीब 32 निरक्षर बंदी अंग्रेजी के बुनियादी शब्द सीख रहे हैं। अभिराम, अभिषेक, नीलेश और अर्जुन अंग्रेजी में बातचीत करना सीख गए हैं। जेल पुस्तकालय में हिंदी और अंग्रेजी की लगभग 1500 पुस्तकें हैं। बंदियों की शिक्षा के लिए पांचवीं, दसवीं और बारहवीं के साथ बीए और एमए की पढ़ाई की व्यवस्था भी है। शिक्षा सत्र 2025-26 में पांचवीं के 38 बंदी उत्तीर्ण हुए, जबकि दसवीं और बारहवीं में लगभग 20 बंदियों ने सफलता प्राप्त की। वर्तमान में 14 बंदी बीए और दो बंदी एमए की पढ़ाई कर रहे हैं।

शिक्षा बंदियों को जेल से बाहर निकलने के बाद रोजगार, आत्मनिर्भरता और सम्मानजनक जीवन के अवसर देती है। अशिक्षा और अवसरों की कमी दोबारा अपराध की ओर धकेल सकती है, जबकि शिक्षा नए विकल्प खोलती है। इसलिए जेल में शिक्षा देना दया नहीं, बल्कि अपराध रोकने और समाज को सुरक्षित बनाने की प्रभावी नीति है। नर्मदापुरम सेंट्रल जेल का यह नवाचार देश की दूसरी जेलों के लिए भी मॉडल बन सकता है। जरूरत है कि इस सोच को व्यापक नीति का हिस्सा बनाया जाए और जेलों में शिक्षा के साथ कौशल विकास के अवसर भी उपलब्ध कराए जाएं। सजा का उद्देश्य केवल दंड देना नहीं, बल्कि व्यक्ति को सुधारकर समाज की मुख्यधारा से जोड़ना भी है। यही वास्तविक सुधार है और यही वास्तविक न्याय है।

84 महादेव दर्शन यात्रा | 54/84 कण्टेश्वर महादेव की यात्रा का पड़ाव

गुरु की कृपा और महादेव की शरण : जीवन के कंटकों से मुक्ति का मार्ग है चौरासी महादेव यात्रा

डॉ. नवीन आनंद जोशी

महाकाल वन का अमर संदेश: जब बुद्धि और सामर्थ्य थक जाएं, तब गुरु की कृपा और शिव की शरण ही दिखाती है राह प्राचीन अवंतिका नगरी की चौरासी महादेव साधना, जो केवल देवदर्शन नहीं बल्कि आचरण-परिष्कार और आत्मचिंतन का महायज्ञ है। कण्टेश्वर महादेव की कथा हमें बताती है कि जब जीवन के मार्ग में संकटों के कंटक बिछ जाएँ, तब गुरु का मार्गदर्शन और भगवान शिव की आराधना मनुष्य को पुन: उसके लक्ष्य तक पहुँचा सकती है।

भारत की आध्यात्मिक परंपरा में तीर्थ केवल देवदर्शन का माध्यम नहीं हैं, बल्कि आत्मचिंतन, आचरण-परिष्कार और जीवन को नई दिशा देने के केंद्र भी हैं। अवंतिका नगरी उज्जयिनी, जहाँ बाबा महाकालेश्वर विराजमान हैं, ऐसी ही पुण्यभूमि है। यहाँ की चौरासी महादेव यात्रा केवल मंदिरों की परिक्रमा नहीं, बल्कि मनुष्य के भीतर श्रद्धा, संयम, विनम्रता और सदाचार को जागृत करने वाली आध्यात्मिक साधना है। चौरासी महादेव की परंपरा में कण्टेश्वर महादेव का विशेष महत्त्व है। इनकी कथा हमें यह संदेश देती है कि जीवन के संकटों का समाधान केवल बाहरी सामर्थ्य में नहीं, बल्कि गुरु के मार्गदर्शन और महादेव की कृपा में भी निहित है।

गुरु का मार्गदर्शन और महादेव की कृपा : पौराणिक मान्यता के अनुसार, प्राचीन काल में राजा सत्य विक्रम का राज्य शत्रुओं ने छीन लिया था। राजसत्ता और वैभव से वंचित होकर वे वन-वन भटकने लगे। इसी क्रम में एक दिन उनकी भेंट महर्षि वशिष्ठ के आश्रम में हुई। राजा ने अपनी व्यथा ऋषि के समक्ष रखी। महर्षि वशिष्ठ ने उन्हें अवंतिका नगरी के महाकाल वन के समीप जाने का निर्देश दिया, जहाँ एक तपस्वी के दर्शन से उन्हें आगे का मार्ग प्राप्त होगा। गुरु की आज्ञा को शिरोधार्य कर राजा महाकाल वन पहुँचे। वहाँ तपस्वी के दर्शन हुए। तपस्वी ने अपनी हुंकार से उन्हें स्वर्ग की अप्सराओं और जलपरियों के दर्शन कराए। राजा ने इस अद्भुत घटना का रहस्य पूछा, तब तपस्वी ने उन्हें शत्रुओं के नाश और राज्य की पुनर्प्राप्ति के लिए भगवान शिव की आराधना करने का मार्ग बताया।राजा सत्य विक्रम ने महादेव की आराधना की। मान्यता है कि शिवलिंग के दर्शन मात्र से उनके शत्रुओं का अंत हुआ और उन्होंने पुन: निष्कंटक होकर पृथ्वी पर राज्य किया। अंतकाल में उन्हें परमपद की प्राप्ति हुई।यह कथा कण्टेश्वर महादेव की महिमा का वर्णन करती है। मान्यता है कि इनके दर्शन से मनुष्य के जीवन के कंटक दूर होते हैं। किंतु इस कथा का गहन आध्यात्मिक अर्थ केवल





शत्रुओं पर विजय तक सीमित नहीं है। यह हमें बताती है कि मनुष्य के वास्तविक कंटक उसके भीतर भी होते हैं-अहंकार, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या और अविवेक। इनसे मुक्ति प्राप्त करना ही वास्तविक विजय है।

जब महादेव की शरण मिलती है, तब मार्ग प्रशस्त होता है : जीवन में अनेक बार ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं, जब मनुष्य अपने सामर्थ्य, बुद्धि और अनुभव के बावजूद समाधान नहीं खोज पाता। ऐसे समय में गुरु का मार्गदर्शन उसे सही दिशा प्रदान करता है। गुरु जीवन के अंध